[2004] सप. 6 एस.सी.आर. 651

झारखंड राज्य एवं अन्य

बनाम

गोविंद सिंह

(आपराधिक अपील संख्या 1405/2004)

03, दिसंबर 2004

[अरिजीत पसायत एवं एस.एच. कपाड़िया, जे.जे.]

वन कानून:

भारतीय वन अधिनियम, 1977 (बिहार अधिनियम, 9, 1990 द्वारा संशोधित)

धारा 52(3) और 68-वाहन की जब्ती-जब्ती के बदले जुर्माना लगाकर रिहाई-अनुमति-संरक्षित वन क्षेत्र में कोयले से लदा एक ट्रैक जब्त किया गया-हाई कोर्ट ने जब्ती के बदले जुर्माना अदा करने पर वाहन को छोड़ने का आदेश दिया और माना कि जब्ती के बदले जुर्माना लगाने की शक्ति को धारा 52(3) के तहत पढ़ा जा सकता है-की सत्यता-माना गया, जब धारा 2(3) के तहत वन अपराध किया जाता है, तो प्रासंगिक वन उपज का मूल्य नहीं बल्कि जब्ती के लिए उत्तरदायी वस्तु का मूल्य होता है-इसलिए, वाहन को वाहन के मूल्य का भुगतान करने पर छोड़ा जा सकता है, अन्यथा नहीं-इसलिए, हाई कोर्ट ने जब्ती के बदले जुर्माना लगाकर वाहन को छोड़ने का निर्देश देने की शक्ति को धारा 52(3) में पढ़कर न्यायोचित नहीं ठहराया।

कासस ओमिसस - शाब्दिक निर्माण - सिद्धांत - अभिनिर्धारित: जहां कानून की "भाषा" स्पष्ट है, विधायिका का इरादा इस्तेमाल की गई भाषा से समझा जाना चाहिए - एक निर्माण जिसके लिए इसके समर्थन के लिए शब्दों के जोड़ या प्रतिस्थापन की आवश्यकता होती है या जिसके परिणामस्वरूप शब्दों को अर्थहीन के रूप में अस्वीकार कर दिया जाता है, उसे छोड़ दिया जाना चाहिए - स्पष्ट आवश्यकता के मामले को छोड़कर न्यायालय द्वारा कासस ओमिसस की आपूर्ति नहीं की जा सकती है।

प्रतिवादी का ट्रक संरक्षित वन क्षेत्र में 11.8 टन कोयले से लदा हुआ पाया गया। प्रभागीय वन अधिकारी ने ट्रक को जब्त करने का निर्देश दिया। हालांकि, उच्च न्यायालय ने जब्ती के बदले जुर्माना अदा करने पर वाहन को छोड़ने का निर्देश दिया और कहा कि जब्ती

के बदले जुर्माना लगाने की शक्ति भारतीय वन अधिनियम, 1927 की धारा 52(3) के तहत पढ़ी जा सकती है। इसलिए अपील की गई।

अपील स्वीकार करते हुए

न्यायालय ने कहा: 1. एकल न्यायाधीश ने विवादित निर्णय में माना कि यद्यपि जब्ती के बदले जुर्माना लगाने की शक्ति नहीं है, लेकिन विधायी मंशा को पूरी तरह से प्रभावी बनाने के लिए इसे भारतीय वन अधिनियम, 1927 की धारा 52(3) में पढ़ा जाना चाहिए। यह एक कैसस ओमिसस का मामला था। निष्कर्ष स्पष्ट रूप से गलत है। यह वैधानिक व्याख्या से संबंधित स्थापित सिद्धांतों के विरुद्ध है। 1658-सी-डी)

2. जब किसी क़ानून के शब्द स्पष्ट, सीधे या अस्पष्ट हों, यानी वे केवल एक ही अर्थ के लिए उचित रूप से संवेदनशील हों, तो न्यायालय परिणामों की परवाह किए बिना उस अर्थ को लागू करने के लिए बाध्य हैं। विधानमंडल का इरादा मुख्य रूप से इस्तेमाल की गई भाषा से जाना जाता है, जिसका अर्थ है कि जो कहा गया है उस पर ध्यान दिया जाना चाहिए और जो नहीं कहा गया है उस पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। (658-ई)

जे.पी. बंसल बनाम राजस्थान राज्य, (2003) 5 धारा 134, पर भरोसा किया गया।

3. ऐसी रचना जिसके समर्थन के लिए शब्दों को जोड़ने या बदलने की आवश्यकता हो या जिसके परिणामस्वरूप शब्दों को अर्थहीन मानकर अस्वीकार कर दिया जाए, उससे बचना चाहिए। न्यायालय कानून को इस अच्छे कारण से पुनः नहीं बना सकता कि उसके पास कानून बनाने का कोई अधिकार नहीं है। (658-एफ-जी)

मध्य प्रदेश राज्य बनाम जी.एस. डाल और फ्लोर मिल्स, एआईआर (1991) एससी 772; गुजरात राज्य बनाम दिलीपभाई नाथजीभाई पटेल, जे.टी. (1998) 2 एससी 253 और जे.पी. बंसल बनाम राजस्थान राज्य, 12003] 5 एससीसी 134, पर भरोसा किया गया।

क्रॉफोर्ड बनाम स्पूनर, (1846) 6 मूर पीसी 1, संदर्भित।

4. इसलिए, जहाँ "भाषा" स्पष्ट है, वहाँ विधानमंडल का इरादा इस्तेमाल की गई भाषा से समझा जाना चाहिए। इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि क़ानून में क्या कहा गया है और क्या नहीं कहा गया है। ऐसा निर्माण जिसके लिए शब्दों को जोड़ने या बदलने की आवश्यकता होती है या जिसके परिणामस्वरूप शब्दों को अस्वीकार करना पड़ता है, उससे बचना चाहिए, जब तक कि वह अपवाद के नियम के अंतर्गत न हो, जिसमें अनिवार्यता भी शामिल है, जो यहाँ मामला नहीं है। [660-सी-डी-ई]

ग्वालियर रेयंस सिल्क मैन्युफैक्चरिंग (डब्ल्यूवीजी) कंपनी लिमिटेड बनाम कस्टोडियन ऑफ वेस्टेड फॉरेस्ट, एआईआर (1990) एससी 1747; श्याम किशोरी देवी बनाम पटना नगर निगम, एआईआर (1966) एससी 1678; एआर अंतुले बनाम रामदास श्रीनिवास नायक,

[1984) 2 एससीसी 500; केरल राज्य बनाम मथाई वर्गीस, (1986) 4 एससीसी 746; भारत संघ बनाम देवकी नंदन अग्रवाल, एआईआर (1992) एससी 96 और जे.पी. बंसल बनाम राजस्थान राज्य, [2003) 5 एससीसी 134 पर भरोसा किया गया।

5. निर्माण के दो सिद्धांत - एक कैसस ओमिसस से संबंधित है और दूसरा पूरे क़ानून को पढ़ने के संबंध में - अच्छी तरह से स्थापित प्रतीत होते हैं। पहले सिद्धांत के तहत न्यायालय द्वारा कैसस ओमिस11 की आपूर्ति स्पष्ट आवश्यकता के मामले को छोड़कर नहीं की जा सकती है और जब इसका कारण क़ानून के चारों कोनों में पाया जाता है, लेकिन साथ ही, कैसस ओमिसस का आसानी से अनुमान नहीं लगाया जाना चाहिए और उस उद्देश्य के लिए किसी क़ानून या धारा के सभी हिस्सों को एक साथ समझा जाना चाहिए और धारा के प्रत्येक खंड को संदर्भ और उसके अन्य खंडों के संदर्भ में समझा जाना चाहिए ताकि किसी विशेष प्रावधान पर लगाए जाने वाले निर्माण से पूरे क़ानून का सुसंगत अधिनियमन हो सके। यह तब और भी अधिक होगा जब किसी विशेष खंड का शाब्दिक निर्माण स्पष्ट रूप से बेतुका या असंगत परिणाम देता है, जो विधानमंडल द्वारा इरादा नहीं किया जा सकता था। [661-सी-डी-ई]

डॉ. आर. वेंकटचलम बनाम उप परिवहन आयुक्त, एआईआर (1977) एससी 842 और सीएसटी बनाम पॉपुलर ट्रेडिंग कंपनी। उज्जैन, एआईआर (2000) एससी 1578, पर भरोसा किया गया।

यूनियन ऑफ इंडिया बनाम फिलिप टियागो डी गामा ऑफ वेदेम वास्को डी गामा, एआईआर (1990) एससी 981; लेनिघ वैली कोल कंपनी बनाम येन्सावेज, 218 एफआर 547; आर्टेमियो बनाम प्रोकोपियो, (1966) 1 क्यूबी 878; ल्यूक बनाम आईआरसी, (1966) एसी 557;

फेंटन बनाम हैम्पटन, 11 मूर पीसी 345 और जोन्स बनाम स्मार्ट 1 टीआर 52, का उल्लेख किया गया।

6. उपर्युक्त विधिक सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए अपरिहार्य निष्कर्ष यह है कि अधिनियम की धारा 52(3) में जब्ती के बदले जुर्माना लगाकर छोड़ने का निर्देश देने की शक्ति को पढ़कर उच्च न्यायालय न्यायोचित नहीं था।

[662-सी)

7. भारतीय वन अधिनियम, 1927 (जैसा कि बिहार अधिनियम, 9, 1990 द्वारा संशोधित) की धारा 52 और 68 के संयुक्त पढ़ने पर जब्ती के लिए उत्तरदायी वाहन को वाहन के मूल्य के भुगतान पर छोड़ा जा सकता है, अन्यथा नहीं। यह निश्चित रूप से एक

विवेकाधीन शक्ति है, जिसका प्रयोग अपराध की गंभीरता पर निर्भर करेगा। अधिकारी को मुआवजे के रूप में वाहन के मूल्य के भुगतान पर वाहन को छोड़ने का अधिकार है। इस विवेकाधीन शक्ति का न्यायिक रूप से प्रयोग किया जाना चाहिए। अधिनियम की धारा 68 अपराधों को शमन करने की शक्ति से संबंधित है। जब विवेकाधीन शक्ति प्रदान की जाती है, तो संबंधित अधिकारी द्वारा कारणों को दर्ज करने के बाद न्यायिक तरीके से इसका प्रयोग किया जाना चाहिए कि शमन करना क्यों आवश्यक था। [664-ए-बी-सी]

8. अधिनियम की धारा 52(3) के अनुसार जब्ती एक तात्कालिक वैधानिक कार्रवाई है, जिसके अनुसार जब अधिनियम की धारा 2(3) में परिभाषित वन अपराध जब्त वाहन के संबंध में किया गया माना जाता है, तो प्राधिकृत अधिकारी वन उपज और वन उपज के परिवहन में शामिल वाहन को जब्त कर सकता है। अधिनियम की धारा 52(3) के अनुसार कार्रवाई करने का आधार संबंधित अधिकारी द्वारा यह विश्वास करना है कि वन अपराध किया गया है। यह वन उपज का मूल्य नहीं है, जो प्रासंगिक है, बल्कि जब्ती के लिए उत्तरदायी वस्तु का मूल्य है। उदाहरण के मामले में यह वन उपज ले जाने वाला ट्रक है। [664-ई-एफ-जी)

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील संख्या 1405/2004

झारखंड उच्च न्यायालय, रांची के दिनांक 19.9.2003 के निर्णय एवं आदेश से, डब्ल्यू.पी. क्रि. संख्या 82/2003

अपीलकर्ताओं की ओर से गोपाल प्रसाद।

न्यायालय का निर्णय अरिजीत पासा वाई.ए.टी., जे. द्वारा सुनाया गया: अनुमति प्रदान की गई।

झारखंड राज्य ने झारखंड उच्च न्यायालय, रांची के विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय के विरुद्ध यह अपील दायर की है, जिसमें कहा गया है कि यद्यपि भारतीय वन अधिनियम, 1927 (संक्षेप में "अधिनियम") की धारा 52 (3) में कोई विशिष्ट प्रावधान नहीं है, जैसा कि बिहार अधिनियम 9, 1990 (जिसे आगे 'बिहार अधिनियम' कहा जाएगा) द्वारा संशोधित किया गया है, तथापि वन अपराध में कथित संलिप्तता के लिए जब्त किए गए वाहन को जब्ती के बदले जुर्माना अदा करने पर छोड़ा जा सकता है।

अपीलकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत पृष्ठभूमि तथ्य इस प्रकार हैं:

10.4.1997 को बड़कागांव संरक्षित वन क्षेत्र में एक ट्रक नंबर बी आर 13-9041 में 1.8 टन कोयला लदा हुआ पाया गया। पेलावल केस नंबर 28/97 से उत्पन्न जब्ती कार्यवाही नंबर 3/1997 शुरू की गई और कारण बताओ नोटिस जारी किया गया। प्रतिवादी ने नोटिस

का जवाब दाखिल किया। उस पर विचार करने के बाद प्रभागीय वन अधिकारी, हजारीबाग ने ट्रक को जब्त करने का निर्देश दिया।

हजारीबाग के उपायुक्त के समक्ष अपील दायर की गई, जिसका क्रमांक 40/1997 था। दिनांक 17.7.1999 के आदेश द्वारा अपील को खारिज कर दिया गया। मामले को प्रतिवादी द्वारा वन एवं पर्यावरण विभाग के पुनरीक्षण प्राधिकारी सह सचिव के समक्ष पुनरीक्षण में लाया गया और दिनांक 3.12.2002 के आदेश द्वारा पुनरीक्षण प्राधिकारी ने पुनरीक्षण को खारिज कर दिया। भारत के संविधान, 1950 (संक्षेप में 'संविधान') के अनुच्छेद 226 के तहत एक याचिका उच्च न्यायालय के समक्ष दायर की गई थी। इसमें प्राथमिक रुख यह था कि वाहन को जब्त करने के बदले जुर्माना अदा करने पर उसे छोड़ने का निर्देश देने में कोई रोक नहीं है। उच्च न्यायालय ने माना कि ले जाए जा रहे कोयले के वजन को लेकर कुछ विवाद था। यह पाया गया कि कोयले का मूल्य निर्धारित नहीं किया गया था और परिवहन किए जा रहे कोयले के मूल्य को देखते हुए प्रत्यक्ष जब्ती करना अनुचित होगा और इसलिए, यह माना गया कि न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए जब्ती के बदले जुर्माना लगाने की शक्ति को अधिनियम की धारा 52 (3) के तहत पढ़ा जा सकता है। तदनुसार, 50,000 रुपये का जुर्माना लगाया गया और जब्ती करने वाले अधिकारी को भुगतान करने पर वाहन को छोड़ने का निर्देश दिया गया।

अपील के समर्थन में, अपीलकर्ता-राज्य के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा लिया गया दृष्टिकोण दिलीप कुमार पांडे बनाम बिहार राज्य और अन्य के मामले में पटना उच्च न्यायालय, रांची पीठ के खंडपीठ के निर्णय के विपरीत है। आपराधिक रिट क्षेत्राधिकार मामला संख्या 12/1997 (आर) जहां एक समान मुद्दे पर विचार करते हुए यह माना गया था कि जब्ती के बदले जुर्माना के भुगतान पर वाहन को छोड़ने का निर्देश देने की कोई गुंजाइश नहीं थी।

नोटिस के बावजूद प्रतिवादी की ओर से कोई उपस्थिति नहीं हुई।

अपीलकर्ताओं के विद्वान वकील द्वारा अपनाए गए रुख को समझने के लिए अधिनियम की धारा 52 और बिहार अधिनियम द्वारा राज्य संशोधन पर ध्यान देना आवश्यक होगा।

> धारा 52 - अधिहरणीय सम्पत्ति का अभिग्रहण: (1) जब यह विश्वास करने का कारण हो कि किसी वन उपज के संबंध में वन अपराध किया गया है, तो ऐसी उपज को, ऐसे अपराध को करने में प्रयुक्त सभी औजारों, नावों, गाड़ियों या मवेशियों सहित, किसी वन अधिकारी या पुलिस अधिकारी द्वारा अभिगृहीत किया जा सकेगा।

(2) इस धारा के अधीन किसी संपत्ति को जब्त करने वाला प्रत्येक अधिकारी ऐसी संपत्ति पर एक चिह्न लगाएगा जो यह दर्शाता हो कि वह इस प्रकार जब्त की गई है, तथा यथाशीघ्र, उस जब्ती की रिपोर्ट उस मजिस्ट्रेट को देगा जिसे उस अपराध का विचारण करने का अधिकार है जिसके कारण जब्ती की गई है:

बशर्ते कि जब वह वन उपज जिसके संबंध में ऐसा अपराध किया गया है, सरकार की संपत्ति है, तथा अपराधी अज्ञात है, तो यह पर्याप्त होगा कि अधिकारी यथाशीघ्र अपने वरिष्ठ अधिकारी को परिस्थितियों की रिपोर्ट दे दे।"

बिहार अधिनियम द्वारा संशोधित धारा 52 - जब्ती और जब्ती योग्य संपत्ति के लिए इसकी प्रक्रिया: (1) जब यह विश्वास करने का कारण हो कि किसी वन उपज के संबंध में वन अपराध किया गया है, तो ऐसी उपज, सभी औजारों, हथियारों, नावों, वाहनों, रस्सियों, जंजीरों या किसी अन्य वस्तु के साथ, जो किसी ऐसे अपराध को करने में उपयोग की गई हो, किसी वन अधिकारी या पुलिस अधिकारी द्वारा जब्त की जा सकेगी।

(2) इस धारा के अधीन किसी संपत्ति को जब्त करने वाला प्रत्येक अधिकारी ऐसी संपत्ति पर एक चिह्न लगाएगा जो यह दर्शाता हो कि वह इस प्रकार जब्त की गई है, और यथाशीघ्र जब्त की गई संपत्ति को या तो राज्य सरकार द्वारा अधिसूचना द्वारा इस संबंध में प्राधिकृत प्रभागीय वन अधिकारी से नीचे की रैंक के अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत करेगा (जिसे इसके पश्चात प्राधिकृत अधिकारी कहा जाएगा) या जब भारी मात्रा या अन्य वास्तविक कठिनाई को देखते हुए, जब्त की गई संपत्ति को प्राधिकृत अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत करना साध्य न हो, या जहां अपराधी के विरुद्ध तुरंत आपराधिक कार्यवाही प्रारंभ करने का इरादा हो, तो उस अपराध का विचारण करने के लिए अधिकारिता रखने वाले मजिस्ट्रेट को ऐसी जब्ती की रिपोर्ट करेगा जिसके कारण जब्ती की गई है:

परन्तु जब वह वन उपज, जिसके सम्बन्ध में ऐसा अपराध किया गया माना जाता है, सरकार की सम्पत्ति है और अपराधी अज्ञात है, तब यह पर्याप्त होगा कि अधिकारी यथाशीघ्र अपने अव्यवहित वरिष्ठ अधिकारी को परिस्थितियों की रिपोर्ट दे दे।

(3) उपधारा (5) के अधीन रहते हुए, जहां प्राधिकृत अधिकारी, यथास्थिति, जब्त की गई संपत्ति को अपने समक्ष प्रस्तुत करने पर या जब्ती के बारे में रिपोर्ट प्राप्त करने पर, संतुष्ट हो जाता है कि उसके संबंध में कोई वन अपराध किया गया है, वहां वह लिखित आदेश द्वारा और कारणों को अभिलिखित करते हुए, ऐसे जब्त किए गए वन उत्पाद को सभी औजारों, हथियारों, नावों, वाहनों, रस्सियों, जंजीरों या ऐसे अपराध को करने में प्रयुक्त किसी अन्य वस्तु सहित जब्त कर सकता है। संबंधित अपराध का विचारण करने की अधिकारिता रखने वाला मजिस्ट्रेट, प्राधिकृत जब्ती अधिकारी की रिपोर्ट के आधार पर,

अपराध को करने में प्रयुक्त वाहन का पंजीकरण, वाहन-चालक का लाइसेंस और हथियारों का लाइसेंस रद्द कर सकता है। जब्ती के आदेश की एक प्रति, उस वन-वृत्त के वन संरक्षकों को बिना किसी अनुचित विलम्ब के भेजी जाएगी जिसमें, यथास्थिति, वन उत्पाद जब्त किया गया है।

(4) उपधारा (3) के अधीन किसी संपत्ति को जब्त करने का कोई आदेश तब तक नहीं दिया जाएगा जब तक कि प्राधिकृत अधिकारी-

(क) उस अपराध का विचारण करने के लिए अधिकारिता रखने वाले मजिस्ट्रेट को संपत्ति जब्त करने की कार्यवाही आरंभ करने के बारे में सूचना न भेजे जिसके कारण जब्ती की गई है;

(ख) उस व्यक्ति को, जिससे संपत्ति जब्त की गई है, तथा किसी अन्य व्यक्ति को, जो प्राधिकृत अधिकारी को ऐसी संपत्ति में कुछ हित रखने वाला प्रतीत होता है, लिखित में सूचना जारी न करे;

(ग) खंड (ख) में निर्दिष्ट व्यक्तियों को प्रस्तावित जब्ती के विरुद्ध सूचना में विनिर्दिष्ट उचित समय के भीतर अभ्यावेदन करने का अवसर न दे; तथा

(घ) जब्ती करने वाले अधिकारी को तथा उस व्यक्ति या व्यक्ति को, जिसे खंड (ख) के अधीन सूचना जारी की गई है, ऐसे प्रयोजनों के लिए नियत की जाने वाली सुनवाई की तारीख न दे।

(5) उपधारा (3) के अन्तर्गत किसी भी उपकरण, शस्त्र, नाव, वाहन, रस्सी, जंजीर या किसी अन्य वस्तु (जब्ती की गई वन उपज के अलावा) की जब्ती का कोई आदेश नहीं किया जाएगा, यदि उपधारा (4) के खण्ड (ख) में निर्दिष्ट कोई व्यक्ति प्राधिकृत अधिकारी के समाधानप्रद रूप में यह साबित कर देता है कि ऐसे किसी उपकरण, शस्त्र, नाव, वाहन, रस्सी, जंजीर या अन्य वस्तु का प्रयोग उसकी जानकारी या मिलीभगत के बिना या, जैसा भी मामला हो, उसके सेवक या अभिकर्ता की जानकारी या मिलीभगत के बिना किया गया था और वन अपराध करने के लिए पूर्वोक्त वस्तुओं के प्रयोग के विरूद्ध सभी उचित और आवश्यक सावधानियां बरती गई थीं।"

विद्वान एकल न्यायाधीश ने विवादित निर्णय में कहा कि यद्यपि जब्ती के बदले जुर्माना लगाने की शक्ति नहीं है, लेकिन विधायी मंशा को पूरी तरह से प्रभावी बनाने के लिए इसे क़ानून में पढ़ा जाना चाहिए। यह एक कैसस ओमिसस का मामला था।

निष्कर्ष स्पष्ट रूप से गलत है। यह वैधानिक व्याख्या से संबंधित स्थापित सिद्धांतों के विरुद्ध है।

जब किसी क़ानून के शब्द स्पष्ट, स्पष्ट या अस्पष्ट होते हैं, यानी: वे केवल एक ही अर्थ के लिए उचित रूप से अतिसंवेदनशील होते हैं, तो न्यायालय परिणामों की परवाह किए बिना उस अर्थ को प्रभावी करने के लिए बाध्य होते हैं। विधानमंडल की मंशा मुख्य रूप से इस्तेमाल की गई भाषा से समझी जानी चाहिए, जिसका अर्थ है कि जो कहा गया है उस पर ध्यान दिया जाना चाहिए और जो नहीं कहा गया है उस पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। [जे.पी. बंसल बनाम राजस थान राज्य, [2003] 5 एससीसी 134 देखें]

परिणामस्वरूप, ऐसे निर्माण से बचना चाहिए जिसके समर्थन के लिए शब्दों को जोड़ने या बदलने की आवश्यकता हो या जिसके परिणामस्वरूप शब्दों को अर्थहीन मानकर खारिज कर दिया जाए। जैसा कि प्रिवी काउंसिल ने क्रॉफोर्ड बनाम स्पूनर, (1846) 6 मूर पीसीएल में उल्लेख किया था: "हम विधानमंडल द्वारा अधिनियम के दोषपूर्ण वाक्यांशों में सहायता नहीं कर सकते, हम इसमें कुछ जोड़ या सुधार नहीं कर सकते और निर्माण द्वारा उन कमियों को पूरा नहीं कर सकते जो वहां रह गई हैं"। इस न्यायालय ने मध्य प्रदेश राज्य बनाम जी.एस. डेल और फ्लोर मिल्स, एआईआर (1991) एससी 772, और गुजरात राज्य बनाम दिलीपभाई नाथजीभाई पटेल, जेटी (1998) 2 एससी 253 में इस दृष्टिकोण को दोहराया था। संक्षेप में कहें तो न्यायालय कानून को फिर से नहीं बना सकता, जैसा कि जे.पी. बंसल के मामले (सुप्रा) में उल्लेख किया गया है, बहुत अच्छे कारण से कि उसके पास कानून बनाने का कोई अधिकार नहीं है। ऐसा कहा जाता है कि एक क़ानून विधानमंडल का एक आदेश है।

किसी क़ानून की व्याख्या या अर्थ लगाने का प्राथमिक सिद्धांत विधानमंडल की राय या सेंटेंशिया लेगिस को एकत्रित करना है।

व्याख्या में किसी विशेष विचार को व्यक्त करने के लिए अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में क़ानून में प्रयुक्त शब्दों के सही अर्थ की खोज की बात कही गई है। यह कार्य आसान नहीं है क्योंकि "भाषा" को अक्सर सामान्य बातचीत या पत्राचार में भी गलत समझा जाता है। त्रासदी यह है कि यद्यपि पत्राचार या बातचीत के मामले में जिस व्यक्ति ने शब्द बोले हैं या भाषा का उपयोग किया है, उससे स्पष्टीकरण के लिए संपर्क किया जा सकता है, लेकिन विधायिका से संपर्क नहीं किया जा सकता क्योंकि विधायिका, किसी कानून या अधिनियम को लागू करने के बाद, उस विशेष अधिनियम के संबंध में पदेन हो जाती है और वह स्वयं उसकी व्याख्या नहीं कर सकती। निस्संदेह, विधायिका के पास इस प्रकार बनाए गए कानून को संशोधित या निरस्त करने की शक्ति है और वह उसका अर्थ भी घोषित कर सकती है, लेकिन ऐसा कानून बनाने की पूरी प्रक्रिया को पूरा करने के बाद ही दूसरा कानून या क़ानून बनाकर किया जा सकता है।

विधान विधायिका का आदेश होने के कारण, यह आवश्यक है कि इसे स्पष्ट और सुस्पष्ट भाषा में व्यक्त किया जाए। न्यायालयों द्वारा ऐसा कहने के बावजूद, ड्राफ्ट्समैन ने इस पर बहुत कम ध्यान दिया है और वे अभी भी पुरानी ब्रिटिश कहावत का बखान करते हैं कि "मैं संसदीय ड्राफ्ट्समैन हूँ। मैं देश के कानून बनाता हूँ। और आधे मुकदमों का कारण निस्संदेह मैं हूँ", जिसका उल्लेख इस न्यायालय ने पैलेस एडमिन बोर्ड बनाम राम वर्मा भारत ई थंपुरन, एआईआर (1980) एससी 1187 पृष्ठ 1195 में किया था। किर्बी बनाम लेदर, [1965] 2 ऑल ईआर 441 में, ड्राफ्ट्समैन की (यूके) लिमिटेशन एक्ट, 1939 की धारा 22(2)(बी) के संबंध में कड़ी आलोचना की गई थी, क्योंकि यह कहा गया था कि धारा इतनी अस्पष्ट थी कि ड्राफ्ट्समैन का दिमाग खराब रहा होगा। हालाँकि, जहाँ शब्द स्पष्ट थे, कोई अस्पष्टता नहीं थी, कोई अस्पष्टता नहीं थी और विधानमंडल की मंशा स्पष्ट रूप से व्यक्त की गई थी, वहाँ न्यायालय के लिए कोई नया काम करने या वैधानिक प्रावधानों में संशोधन या परिवर्तन करने का कार्य अपने ऊपर लेने की कोई गुंजाइश नहीं थी। उस स्थिति में न्यायाधीशों को यह घोषणा नहीं करनी चाहिए कि वे न्यायिक वीरता के प्रदर्शन के लिए मात्र विधि-निर्माता की भूमिका निभा रहे हैं। उन्हें याद रखना चाहिए कि एक रेखा है, हालाँकि पतली, जो न्याय-निर्णय को विधान से अलग करती है। उस रेखा को पार नहीं किया जाना चाहिए या मिटाया नहीं जाना चाहिए। इसे "उसे पार न करने की आवश्यकता की सतर्क मान्यता और ऐसा करने के लिए सहज और प्रशिक्षित अनिच्छा" द्वारा प्रमाणित किया जा सकता है। (देखें: फ्रैंकफर्टर, "न्यायशास्त्र पर निबंध" में विधियों के पठन पर कुछ विचार, कोलंबिया लॉ रिव्यू, पृष्ठ 51।)

यह सच है कि संविधान की व्याख्या करने में इस न्यायालय को वह स्वतंत्रता प्राप्त है जो किसी क़ानून की व्याख्या करने में उपलब्ध नहीं है और इसलिए, इस स्तर पर यह उपयोगी होगा कि लॉर्ड डिप्लॉक ने डुपोर्ट स्टील्स लिमिटेड बनाम सिर्स, (1980] 1 एएलएल ईआर 529, पृष्ठ 542 में जो कहा है उसे पुनः प्रस्तुत किया जाए:

> "यह न्यायपालिका की राजनीतिक निष्पक्षता में जनता के विश्वास को खतरे में डालता है, जो कानून के शासन को जारी रखने के लिए आवश्यक है, यदि न्यायाधीश, व्याख्या की आड़ में, कानूनों में अपने स्वयं के पसंदीदा संशोधन प्रदान करते हैं, जिनके संचालन के अनुभव से पता चला है कि अदालत के सदस्य जिनके पास मामला आता है, वे सार्वजनिक हित के लिए हानिकारक मानते हैं।"

इसलिए, जहाँ "भाषा" प्रिय है, वहाँ विधानमंडल का इरादा इस्तेमाल की गई भाषा से समझा जाना चाहिए। इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि क़ानून में क्या कहा गया है और क्या नहीं कहा गया है। ऐसा निर्माण जिसके समर्थन के लिए शब्दों को जोड़ने या

बदलने की आवश्यकता होती है या जिसके परिणामस्वरूप शब्दों को अस्वीकार करना पड़ता है, उसे तब तक टाला जाना चाहिए, जब तक कि वह अपवाद के नियम के अंतर्गत न हो, जिसमें अनिवार्यता भी शामिल है, जो यहाँ मामला नहीं है। (देखें: ग्वालियर रेयॉन्स सिल्क मैन्युफैक्चरिंग (डब्ल्यूवीजी) कंपनी लिमिटेड बनाम वेस्टेड फॉरेस्ट्स के संरक्षक, एआईआर (1990) एससी 1747, पृष्ठ 1752 पर; श्याम किशोरी देवी बनाम पटेरिया म्युनिसिपल कॉरपोरेशन, एआईआर (1966) एससी 1678, पृष्ठ 1682 पर; ए.आर. अंतुले बनाम ई. रामदास श्रीनिवास नायक, (1984] 2 सेक्शन 500, पृष्ठ 518, 519 पर)। वास्तव में, न्यायालय कानून को फिर से नहीं बना सकता क्योंकि उसके पास कानून बनाने का कोई अधिकार नहीं है। (देखें केरल राज्य/एवी. मथाई वर्गीस, (1986] 4 एससीसी 746, पृष्ठ 749 पर; भारत संघ बनाम देवकी नंदन अग्रवाल, एआईआर (1992) एससी 96, पृष्ठ 101 पर)

सवाल यह नहीं है कि क्या माना जा सकता है और क्या इरादा किया गया है, बल्कि यह है कि क्या कहा गया है। "क़ानूनों को यूक्लिड के प्रमेयों के रूप में नहीं समझा जाना चाहिए"। जज लर्न्ड हैंड ने कहा, "लेकिन शब्दों को उनके पीछे छिपे उद्देश्यों की कुछ कल्पना के साथ समझा जाना चाहिए"। (लेनिघ वैली कोल कंपनी बनाम येन्सावेज, 218 एफआर 547 देखें)। यूनियन ऑफ इंडिया और अन्य बनाम फिलिप टियागो डी गामा ऑफ वेडेम वास्को डी गामा, एआईआर (1990) एससी 981 में इस दृष्टिकोण को फिर से दोहराया गया।

डॉ. आर. वेंकटचलम और अन्य बनाम उप परिवहन आयुक्त और अन्य आदि एआईआर (1977) एससी 842 में यह देखा गया कि न्यायालयों को किसी प्रावधान के अर्थ के बारे में अपने स्वयं के पूर्व-कल्पित वैचारिक विचार या योजना के आधार पर पूर्व-निर्धारित करने के खतरे से बचना चाहिए, जिसमें व्याख्या किए जाने वाले प्रावधान को कुछ हद तक फिट किया जाता है। वे व्याख्या के बहाने विधायी कार्य को हड़पने के हकदार नहीं हैं।

किसी प्रावधान की व्याख्या करते समय न्यायालय केवल कानून की व्याख्या करता है और उस पर कानून नहीं बना सकता। यदि कानून के किसी प्रावधान का दुरुपयोग किया जाता है और कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग किया जाता है, तो विधायिका को उसे संशोधित, संशोधित या निरस्त करना होता है, यदि आवश्यक समझा जाए। (देखें कमिश्नर ऑफ सेल्स टैक्स, एमपी बनाम पॉपुलर ट्रेडिंग कंपनी, उज्जैन, एएलआर (2000) एससी 1578)। विधायी कैसस ओमिसस को न्यायिक व्याख्यात्मक प्रक्रिया द्वारा आपूर्ति नहीं की जा सकती।

निर्माण के दो सिद्धांत-एक जो कि कैसस ओमिसस से संबंधित है और दूसरा जो कि पूरे क़ानून को पढ़ने के संबंध में है-सुव्यवस्थित प्रतीत होते हैं। पहले सिद्धांत के तहत

न्यायालय द्वारा कैसस ओमिसस की आपूर्ति नहीं की जा सकती है, सिवाय स्पष्ट आवश्यकता के मामले में और जब इसका कारण क़ानून के चारों कोनों में पाया जाता है, लेकिन साथ ही कैसस ओमिसस का आसानी से अनुमान नहीं लगाया जाना चाहिए और उस उद्देश्य के लिए किसी क़ानून या धारा के सभी भागों को एक साथ समझा जाना चाहिए और किसी धारा के प्रत्येक खंड को संदर्भ और उसके अन्य खंडों के संदर्भ में समझा जाना चाहिए ताकि किसी विशेष प्रावधान पर लगाया जाने वाला निर्माण पूरे क़ानून का सुसंगत अधिनियमन बना सके। यह तब और भी अधिक होगा जब किसी विशेष खंड का शाब्दिक निर्माण स्पष्ट रूप से बेतुके या असंगत परिणामों की ओर ले जाता है जो कि विधानमंडल द्वारा अभिप्रेत नहीं हो सकते थे। डैनकवर्ट्स, एल.जे. ने आर्टेमियो बनाम प्रोकोपियो, [1966] 1 क्यू बी 878 में कहा, "अनुचित परिणाम उत्पन्न करने का इरादा किसी क़ानून पर आरोपित नहीं किया जाना चाहिए, यदि कोई अन्य निर्माण उपलब्ध है"। जहाँ शब्दों को शाब्दिक रूप से लागू करना "विधानसभा के स्पष्ट इरादे को पराजित करेगा और पूरी तरह से अनुचित परिणाम उत्पन्न करेगा" हमें "शब्दों के साथ कुछ हिंसा करनी चाहिए" और इस तरह उस स्पष्ट इरादे को प्राप्त करना चाहिए और एक तर्कसंगत निर्माण करना चाहिए। (ल्यूक बनाम /आरसी, (एल 966) एसी 557 में लॉर्ड रीड के अनुसार, जहाँ पृष्ठ 577 पर उन्होंने यह भी कहा: "यह कोई नई समस्या नहीं है, हालाँकि हमारे प्रारूपण का मानक ऐसा है कि यह शायद ही कभी सामने आता है"।

यह सच है कि, "जब किसी कानून के शब्द किसी ऐसी असुविधा तक नहीं पहुंचते जो कभी-कभार होती है, बल्कि उन असुविधाओं के कारण होते हैं जो अक्सर होती हैं, तो यह अच्छा कारण है कि शब्दों को उनकी पहुंच से परे न खींचा जाए, यह कहकर कि यह कैसस ओमिसस है, और कानून का उद्देश्य क्वैफ्रीक्वेंटियस एक्सीडेंट है।" "लेकिन," दूसरी ओर, "यह कोई कारण नहीं है, जब किसी कानून के शब्द किसी ऐसी असुविधा तक पहुंचते हैं जो कभी-कभार होती है, तो उन्हें उस पर उतना ही विस्तार नहीं करना चाहिए जितना कि अगर ऐसा अधिक बार होता है, क्योंकि ऐसा बहुत कम होता है" (देखें फेंटन बनाम हैम्पटन एल आई मूर, पी.सी. 345)। कैसस ओमिसस को व्याख्या द्वारा नहीं बनाया जाना चाहिए, सिवाय कुछ मजबूत आवश्यकता के मामले में। हालांकि, जहां वास्तव में कोई मामला घटित होता है, चाहे वह विधानमंडल की असावधानी के कारण हो, या विधायकों के अस्तित्व के सिद्धांत के आधार पर, नियम यह है कि विशेष मामले को, जिसके लिए कोई प्रावधान नहीं किया गया है, उस कानून के अनुसार निपटाया जाना चाहिए जैसा कि ऐसे क़ानून के पहले था - केसस बी ओमिसस एट ओब्लिवियोनी डेटस डिस्पोज़िशनी कम्युनिस ज्यूरिस रिलिनक्विटुर; "केसस ओमिसस," जोन्स बनाम स्मार्ट (1 टी.आर. 52) में बुलर, जे. ने कहा,

"किसी भी मामले में कानून की अदालत द्वारा आपूर्ति नहीं की जा सकती है, क्योंकि ऐसा करना कानून बनाना होगा।"

उपर्युक्त कानूनी सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए अपरिहार्य निष्कर्ष यह है कि उच्च न्यायालय द्वारा अधिनियम की धारा 52 (3) में जब्ती के बदले जुर्माना लगाकर रिहाई का निर्देश देने की शक्ति को पढ़ना उचित नहीं था।

मामले को दूसरे दृष्टिकोण से भी देखा जा सकता है। अधिनियम की धारा 68 इस प्रकार है:

धारा 68-अपराधों का शमन करने की शक्ति: (I) राज्य सरकार, आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, वन अधिकारी को सशक्त कर सकती है-

(क) किसी ऐसे व्यक्ति से, जिसके विरुद्ध यह उचित संदेह हो कि उसने धारा 62 या धारा 63 में निर्दिष्ट अपराध के अलावा कोई वन अपराध किया है, उस अपराध के लिए प्रतिकर के रूप में धनराशि स्वीकार करने की, जिसके बारे में उस व्यक्ति पर संदेह है कि उसने अपराध किया है, और

(ख) जब कोई संपत्ति जब्त की गई हो, जिसे जब्त किया जा सकता है, तो ऐसे अधिकारी द्वारा अनुमानित मूल्य के भुगतान पर उसे मुक्त करने की शक्ति।

(2) ऐसी धनराशि, या ऐसे मूल्य, या दोनों, जैसा भी मामला हो, ऐसे अधिकारी को भुगतान करने पर, संदिग्ध व्यक्ति, यदि हिरासत में है, तो उसे मुक्त कर दिया जाएगा; जब्त की गई संपत्ति को मुक्त कर दिया जाएगा, और ऐसे व्यक्ति या संपत्ति के विरुद्ध कोई और कार्यवाही नहीं की जाएगी।

(3) किसी वन अधिकारी को इस धारा के तहत सशक्त नहीं किया जाएगा, जब तक कि वह वन अधिकारी न हो, जो किसी वन अधिकारी से कम रैंक का न हो। रैंजर है और उसे कम से कम एक सौ रुपये मासिक वेतन मिलता है, और उप-धारा (1) के खंड (क) के तहत मुआवजे के रूप में स्वीकार की गई धनराशि किसी भी मामले में पचास रुपये से अधिक नहीं होगी।

उक्त धारा को राज्य संशोधन द्वारा भी संशोधित किया गया था। संशोधित प्रावधान इस प्रकार है:

धारा 68- अपराधों का शमन करने की शक्ति: (1) राज्य सरकार, आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, वन अधिकारी को यह अधिकार दे सकती है कि

(क) किसी ऐसे व्यक्ति से, जिसके विरुद्ध यह उचित संदेह हो कि उसने धारा 26 के खंड (ग) और (घ), धारा 33 के खंड (ग) और (घ) या धारा 62 या धारा 63 में निर्दिष्ट अपराध के अलावा कोई वन अपराध किया है, उस अपराध के लिए प्रतिकर के रूप में

धनराशि स्वीकार करे, जिसके बारे में उस व्यक्ति पर संदेह है कि उसने अपराध किया है, और

(ख) जब कोई संपत्ति जब्त की गई हो, जिसे जब्त किया जा सकता हो, तो ऐसे अधिकारी द्वारा अनुमानित मूल्य के भुगतान पर उसे मुक्त कर दे।

(2) ऐसी धनराशि, या ऐसे मूल्य, या दोनों, जैसा भी मामला हो, ऐसे अधिकारी को भुगतान करने पर, संदिग्ध व्यक्ति, यदि हिरासत में है, तो उसे मुक्त कर दिया जाएगा, जब्त की गई संपत्ति को मुक्त कर दिया जाएगा, और ऐसे व्यक्ति या संपत्ति।

(3) किसी वन अधिकारी को इस धारा के अंतर्गत तब तक सशक्त नहीं किया जाएगा जब तक कि वह सहायक वन संरक्षक से निम्न रैंक का वन अधिकारी न हो।

अधिनियम की धारा 68 के अनुसार कार्य करने की शक्ति धारा 26 के खण्ड (ग) और (घ), धारा 33 के खण्ड (ग) और (घ) या धारा 62 या धारा 63 में विनिर्दिष्ट अपराधों के अलावा अन्य अपराधों तक सीमित है। धारा 68 की उपधारा (1)(ख) भी प्रासंगिक है। यह प्रावधान करती है कि जहां कोई संपत्ति जब्त की गई है जो जब्ती योग्य है, राज्य सरकार द्वारा सशक्त अधिकारी को उस अधिकारी द्वारा अनुमानित मूल्य के भुगतान पर उसे छोड़ने की शक्ति है। अधिकारी को राज्य सरकार द्वारा आधिकारिक राजपत्र में सशक्त किया जाना चाहिए। स्थिति के अनुसार कार्य करने के लिए जब्त या जब्ती योग्य संपत्ति के मूल्य का अनुमान लगाना होगा। इसलिए, बिहार अधिनियम द्वारा संशोधित अधिनियम की धारा 52 और धारा 68 के संयुक्त वाचन पर, जब्ती योग्य वाहन को वाहन के मूल्य के भुगतान पर छोड़ा जा सकता है, अन्यथा नहीं। अधिकारी को मुआवजे के रूप में वाहन के मूल्य का भुगतान करने पर वाहन को छोड़ने का अधिकार है। इस विवेकाधिकार का न्यायिक रूप से प्रयोग किया जाना चाहिए। अधिनियम की धारा 68 अपराधों को शमन करने की शक्ति से संबंधित है। यह बिना कहे ही स्पष्ट है कि जब विवेकाधिकार प्रदान किया जाता है, तो संबंधित अधिकारी द्वारा कारणों को दर्ज करने के बाद न्यायिक तरीके से इसका प्रयोग किया जाना चाहिए कि शमन करना क्यों आवश्यक था। वर्तमान मामले में, विद्वान एकल न्यायाधीश ने अधिनियम की धारा 68 के तहत उपलब्ध शक्ति का उल्लेख नहीं किया और इसके विपरीत, अधिनियम की धारा 52 में जब्ती के बदले जुर्माना लगाने की शक्ति को पढ़ने की अवधारणा पेश की, जो कि अस्वीकार्य है। आरोपित निर्णय में कहीं भी जब्ती के लिए उत्तरदायी ट्रक का मूल्य नहीं दर्शाया गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रथम अपीलीय न्यायालय और पुनरीक्षण प्राधिकरण ने इसे एक उपयुक्त मामला नहीं माना, जहां वाहन को छोड़ा जाना था और उनका विचार था कि जब्ती वारंट की गई थी। उन्होंने इस तथ्य पर

विशेष ध्यान दिया कि जब्त की गई वस्तुओं को अपने कब्जे में लेने के लिए फर्जी और मनगढ़ंत दस्तावेज पेश किए गए थे। किसी भी मामले में प्रतिवादी ने अधिनियम की धारा 68 के तहत समझौता करने के लिए कोई प्रार्थना नहीं की थी।

अधिनियम की धारा 52 की उपधारा (3) के अनुसार जब्ती एक तात्कालिक वैधानिक कार्रवाई है, जिसके अनुसार जब यह माना जाता है कि जब्त वाहन के संबंध में अधिनियम की धारा 2(3) में परिभाषित वन अपराध किया गया है, तो प्राधिकृत अधिकारी वन उपज और वन उपज के परिवहन में शामिल वाहन को जब्त कर सकता है। अधिनियम की धारा 52(3) के अनुसार कार्रवाई का आधार संबंधित अधिकारी का यह विश्वास है कि वन अपराध किया गया है। प्रासंगिक बात वन उपज का मूल्य नहीं है, बल्कि जब्ती के लिए उत्तरदायी वस्तु का मूल्य है। वर्तमान मामले में जब्ती वन उपज ले जाने वाला ट्रक है। उच्च न्यायालय का निर्णय स्पष्ट रूप से अक्षम्य है, इसे रद्द किया जाना चाहिए, जिसे हम निर्देश देते हैं। अपील स्वीकार की जाती है।

वी.एस.एस. अपील स्वीकृत।

<u>यह अनुवाद ज्ञान रंजन, पैनल अनुवादक द्वारा किया गया।</u>